



एकात्म मानव दर्शन के सन्दर्भ में पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का सामाजिक चिंतन।

विनय कुमार, (शोध छात्र)

शिक्षा संकाय, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, (उ०प्र०)

डॉ. सुरेश कुमार, (सहायक आचार्य)

शिक्षा संकाय, महात्मा ज्योतिबा फुले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, (उ०प्र०)

सारांश

एकता के सार के आधार पर एकात्म मानववाद के अनुसार हमारा लक्ष्य इहलोक में व्यक्तिगत, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रगति है। यह एक लोक दर्शन है। इसमें मानव जीवन के लक्ष्य व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन के अनुसार सत्यम्, शिवम्, सुंदरम् के मूल्य साक्षात्कार करना है। मानव प्रगति के लिए योजना बनाते समय एकात्म मानववाद व्यक्तिगत व सामाजिक जीवन पर नजर रखता है। इसमें समस्त मानव जगत का कल्याण है। एकात्म मानववाद एक बहुत व्यापक और गतिशील दृष्टिकोण है यह भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषता है। जहाँ सौख्य दर्शन और गीता में संसार का निर्माण मनुष्य की एकता से हुआ, वहीं शंकर का अद्वैत, वेदांत दर्शन का संदेश देता है। यदि अपवाद के रूप में चार्वाक दर्शन को छोड़ दे तो प्रचीन वेदों, उपनिषदों के समकालीन भारतीय दार्शनिक जैसे—महात्मा गाँधी, विवेकानन्द, रवीन्द्र नाथ टैगोर, श्री अरविन्दो जैसे प्रमुख दार्शनिकों के विचारों में यह अद्वैतवादी दृष्टिकोण दृश्यमान है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी एक ऐसे समकालीन दार्शनिक हैं जिन्होंने अपना दर्शन दिया है।

कुंजी— पं० दीनदयाल उपाध्याय, एकात्म मानवदर्शन, सामाजिक चिंतन, एकात्म मानवदर्शन और समाज व्यवस्था।

प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक और चिंतनशील प्राणी है। मानव का आदर्श मानवता है। यही मूल सिद्धांत सैकड़ों वर्षों से मानव चिंतन का केन्द्र रहा है। जबसे मनुष्य का चिंतन प्रारम्भ हुआ, मानव ही चिंतन का केन्द्र बिन्दु रहा है। प्रारम्भिक अवस्था में यह चिंतन आत्मपरक और व्यक्ति केन्द्रित था। सामाजिक विकास क्रम में इस चिंतन का एक दूसरा सूक्ष्म और बहिर्केन्द्रित रूप विकसित होता रहा, चिंतन का यही पक्ष दर्शन में मानवता कहलाया। मानवतावाद एक प्रमुख दार्शनिक विचारधारा है। मानवतावाद की दृष्टि से मानव का सृष्टि में महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि मानव मूल्यों की स्थापना करना ही आज विश्व की प्रमुख चुनौती है। एक सामाजिक प्राणी के रूप में मानव समाज के अनुसार आचरण करता है। मानव समाज में रहकर मानवीय मूल्यों की रक्षा करता है यह मानव का अधिकार और नैतिक उत्तरदायित्व रहा है। आज आजादी के इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी यह हमारे देश के सामने एक महत्वपूर्ण सवाल बना हुआ है, कि हम पूरी जिंदगी के रचनात्मक दृष्टिकोण से किस दिशा में जायें। आम तौर पर लोग इस संबंध में सोचने के लिए तैयार नहीं होते हैं। वे तत्काल प्रश्नों के बारे में सोचते हैं। कभी कभी उन्हें आर्थिक प्रश्नों के साथ हल करने का प्रयास किया जाता है, तो कभी कभी शैक्षिक, सामाजिक प्रश्नों के साथ हल करने का प्रयास

किया जाता है। लेकिन उन्हें वैसी सफलता नहीं मिलती जैसे उन्हें मिलनी चाहिए। पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी के एकात्मवाद का मूल उद्देश्य पूँजीवाद, मार्क्सवाद, समाजवाद और अंधा-धुंध औद्योगीकरण की आलोचना करना था। एकात्म मानववाद में प्रमुख मुद्दे जो प्रभावी रूप से सामने आते हैं। पहला सामाजिक, शैक्षिक, राजनैतिक, घटनाओं की घटना और दूसरा दीनदयाल उपाध्याय का भारत की शासन प्रणाली के विभिन्न हिस्सों के प्रत्यक्ष अनुभव जो उनकी विचार प्रक्रिया और रचना को गहराई से प्रभावित करते हैं, का वर्णन एकात्मवाद में किया गया है। दीनदयाल उपाध्याय जी का भारतीय शिक्षा दर्शन में महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय परिस्थितियों में भी चिंतन प्रणाली विकसित हुई उनमें एकात्म मानवदर्शन एक प्रमुख शैक्षिक सामाजिक दर्शन है। उपाध्याय जी द्वारा प्रतिपादित एकात्म मानवदर्शन के मुख्यतः दो भाग हैं। पहला पाश्चात्य जीवन दर्शन तथा दूसरा भारतीय संस्कृति। पाश्चात्य संस्कृति में लौकिक जीवन का आधिपत्य है, जबकि भारतीय दर्शन में मानव सर्वोपरि है। उपाध्याय जी ने पश्चिम के मानवतावाद का भारतीयकरण कर उन्होंने एकात्म मानववाद का प्रतिपादन किया है। पाश्चात्य जीवन शैली ने मनुष्य को अति रहस्यवादी व आडम्बरवादी बना दिया है। जिसके कारण वह भौतिकवादी होने के साथ-साथ मर्यादाहीन व भोगवादी हो गया। और इसी लौकिकता के कारण पश्चिम का यांत्रिकीकरण हो गया। दीनदयाल उपाध्याय जी इस क्रूर व मर्यादाहीन आचरण के खिलाफ थे वे जनमानस को पश्चिम के अंधानुकरण के प्रति सतर्क करते रहे।

पं० दीनदयाल उपाध्याय जी का एकात्म मानववाद दर्शन

पं० दीनदयाल उपाध्याय ने 22 से 25 अप्रैल 1965 में मुम्बई में भाषण दिया था, एकात्म मानववाद इसी भाषण का सार है। जिसे भारतीय जनसंघ ने आधिकारिक सिद्धांत के रूप में अपनाया। इस सिद्धांत की व्याख्या आपसी भाईचारे के रूप में की जाती है। उपाध्याय जी ने स्वदेशी, सर्वोदय, स्वराज जैसे गाँधीवादी सिद्धांतों का समर्थन किया। इन सिद्धांतों को सामाजिक, सांस्कृतिक, मूल्यों को महत्व देने के लिये अपनाया गया। आपके अनुसार हमारे देश का प्राथमिक उद्देश्य एक स्वदेशी विकास मॉडल विकसित करना होना चाहिए जिसका केन्द्र बिन्दु मानव हो। इसी अवधारणा ने एकात्म मानववाद को समाजवाद और पूँजीवाद से अलग बना दिया है। एकात्म मानववाद, पूँजीवादी व्यक्तिवाद और मार्क्सवादी समाजवाद दोनों का विरोध करता है लेकिन पश्चिमी विज्ञान का स्वागत करता है। उपाध्याय जी पूँजीवादी विचारधारा तथा समाजवाद दोनों के खिलाफ थे उनका मानना था कि यह दोनों विचार-धाराएँ भारत के लिए उपयुक्त और व्यवहारिक नहीं हैं। वे पाश्चात्य जगत के विरुद्ध मानव और समाज को विभाजित करके देखने के पक्षधर नहीं थे।

उपाध्याय जी के अनुसार मानव जाति में शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के चार पदानुक्रमित गुण हैं जो धर्म, अर्थ काम और मोक्ष के सार्वभौमिक उद्देश्यों के अनुरूप हैं। इनमें से किसी की भी अवहेलना नहीं की जा सकती। उपाध्याय जी का मानना था कि पूँजीवादी तथा समाजवादी यह दोनों विचारधाराएँ केवल शरीर और मन की आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। इन दोनों सिद्धांतों का लक्ष्य केवल सांसारिक इच्छाओं की पूर्ति और धनार्जन है। जबकि मानव के सम्पूर्ण विकास के लिए आवश्यक है कि भारतीय दर्शन के चार लक्ष्यों, पुरुषार्थों के अनुरूप व्यक्ति और समाज की भौतिक व आध्यात्मिक की पूर्ति करना। मनुष्य को चरम सुख और वैभव तभी प्राप्त हो सकता है जब उसका, शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा ये चारों अंग ठीक रहें। मनुष्य को अपने शरीर, मन, बुद्धि, और आत्मा इन चारों की चिंता रहती है मानव की इसी प्रवृत्ति को उपाध्याय जी ने एकात्म मानववाद की संज्ञा दी है। यह पूँजीवाद और समाजवाद के बीच एक मध्यम मार्ग की तलाश करता है और उपरोक्त दोनों प्रणालियों का उनके संबंधित गुणों के आधार पर मूल्यांकन करता है।

एकात्म मानवदर्शन का एक और अर्थ है कि व्यक्ति अपना चाहे जितना विकास कर ले, पर जब तक उस समाज का विकास नहीं होगा जिसका कि वह अंग है तब तक उसका कोई सम्मान नहीं होता। समाज व्यक्ति का ही वाह्य रूप है। अतः समाज की उन्नति में व्यक्ति की उन्नति तथा व्यक्ति की उन्नति में समाज की उन्नति समाहित है। पं० दीनदयाल उपाध्याय के एकात्म मानव दर्शन की अवधारणा भारतीय सांस्कृतिक चिन्तन पर आधारित है। दीनदयाल उपाध्याय जी का मानना था कि भौतिकवाद, अर्थवाद, समाधान कम और गुमराह ज्यादा करता है। मानव के सम्पूर्ण विकास को खण्ड-खण्ड करके नहीं देखा जा सकता उसके लिए एकात्म दृष्टि चाहिए। मनुष्य को सभी प्रकार की आवश्यक वस्तुओं की जरूरत है। उसे समाज भी चाहिए और आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति भी चाहिए शायद इसीलिए दीनदयाल उपाध्याय ने मानव के विकास को एकात्मवाद की संज्ञा दी है। एकात्म मानवदर्शन मानव के सम्पूर्ण विकास की बात करता है। दीनदयाल उपाध्याय जी के सारगर्भित चिंतन के परिपाक के रूप में प्रस्फुटित एकात्म मानवदर्शन का वर्णन एक वाक्य में

करना हो तो कहा जा सकता है कि— “पुरुषार्थ चतुष्टय के आलोक में व्यक्ति, समाज, प्रकृति एवं परमात्मा (व्यष्टि, समष्टि, सृष्टि एवं परमेष्टि) के बीच सामंजस्यपूर्ण व बाधारहित व्यवहार हेतु ऐसी आर्थिक, सामाजिक, संरचनाओं का युगानुकूल विकास करना, जो मनुष्य को शरीर, मन, बुद्धि व आत्मा का सुख प्रदान कर उसे परिपूर्णता की ओर अग्रसर कर सकें।”

पं० दीनदयाल उपाध्याय जी का सामाजिक चिंतन

एकात्म मानववाद एक ऐसी धारणा है जो सर्पिलाकार मण्डलाकृति द्वारा स्पष्ट की जा सकती है जिसके केन्द्र में व्यक्ति, व्यक्ति से जुड़ा हुआ परिवार से जुड़ा हुआ समाज, समाज से राष्ट्र, विश्व और फिर अनन्त ब्रम्हाण्ड को अपने में समाविष्ट किये हैं। इस अखण्ड मण्डलाकार आकृति में एक से दूसरे फिर दूसरे से तीसरे का विकास होता जाता है। सभी एक दूसरे से जुड़कर अपना अस्तित्व साधते हुए एक दूसरे के पूरक एवं स्वाभाविक सहयोगी हैं। इनमें आपस में कोई संघर्ष नहीं है। हमारा भारतीय दर्शन सृष्टि और समष्टि को समग्र रूप में देखता है। एकात्म मानववाद के माध्यम से उपाध्याय जी ने मानव के सम्पूर्ण सृष्टि से सम्बंध पर व्यापक दृष्टिकोण रखने का काम किया था। वे मानव को बाँटने के पक्षधर नहीं थे। दुनिया के इतिहास में केवल मनुष्य मात्र के लिए अगर किसी विचार दर्शन ने समग्रता में चिंतन प्रस्तुत किया है तो वो एकात्म मानववाद का दर्शन है। यह सभी मानव समाज के कल्याण का आदर्श दर्शन है।

दीनदयाल उपाध्याय जी के अनुसार “व्यक्ति और समाज अभिन्न और अविभाज्य है।” दुनिया में केवल समर्थ ही जिंदा नहीं रहता, कमजोर भी जिंदा रहता है। सभ्यता का अर्थ ही यही है कि कमजोर की भी रक्षा हो। चिकित्सा, आयुर्वेद और औषधियों की आवश्यकता इसलिये है कि दुर्बल भी जीवित रह सके समर्थ तो अपने आप रह लेगा। राज्य की स्थापना इसलिए की गयी ताकि मत्स्य न्याय न रहे। समाज व नियम इसलिए बने हैं। ताकि समर्थ दुर्बल को समाप्त न कर दें। प्रकृति भी सहयोग के आधार पद चलती है। वनस्पति और प्राणी एक दुसरे के पूरक बने हैं। दोनों में संघर्ष नहीं है। हमें आक्सीजन की आवश्यकता है जो हमें वनस्पति जगत से प्राप्त होती है। तथा वनस्पति जगत को आवश्यकता है कार्बनडाई आक्साइड की जो प्राणी जगत से प्राप्त होती है। उपाध्याय जी के अनुसार व्यक्ति व समाज एकात्म है अर्थात् भिन्न नहीं है। जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू होते हैं। ठीक उसी प्रकार व्यष्टि और समष्टि दोनों अविभाज्य है। जब कोई यह प्रश्न करता है। कि व्यक्ति बड़ा या समाज ? तो हिसाब लगाना मुश्किल हो जाता है। वे व्यक्ति और समाज दोनों को अभिन्न तथा जीवमान इकाई मानते हैं सुसंस्कृति व्यवस्था वही है कि जहाँ व्यक्ति अपनी चिंता करते हुए भी समाज की चिंता करे दोनों में पूरकता है।

पं० दीनदयाल उपाध्याय जी का मानना है कि प्रभुता व्यक्ति की हो या समाज की दोनों ही विचार एकांगी हैं। वस्तुतः पश्चिम के सोचने में ही द्वैत घुस गया है। वहाँ प्रत्येक को संघर्ष के आधार पर ही देखा जाता है। संघर्ष में प्रायः दो की आवश्यकता होती है। किन्तु भारतीय चिंतन अद्वैत है। यहां दो को जो एक देखता है वही ठीक देखता है। संघर्ष और द्वैत की आवधारणा के खण्डन के साथ ही दीनदयाल उपाध्याय सामाजिक समझौता सिद्धान्त को भी पश्चिम में व्याप्त प्राणलेवा स्पर्धा, संघर्ष, तनाव, रक्तपात आदि का प्रमुख कारण मानते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि पंडित दीनदयाल उपाध्याय चिंतन में व्यक्ति और समाज अलग-अलग नहीं है। व्यक्ति और समाज में कोई संघर्ष नहीं है। एक को मिटाकर दूसरा नहीं चल सकता वास्तव में व्यक्ति से अलग समाज और समाज से अलग व्यक्ति की कल्पना निरर्थक है। व्यक्ति और समाज में वही सम्बंध है जो स्वरूप और सामग्री में है। सामग्री के बगैर स्वरूप तथा स्वरूप के बगैर सामग्री नहीं हो सकता। दोनों का अस्तित्व अन्योन्याश्रित है।

एकात्म मानवदर्शन और समाज व्यवस्था

दीनदयाल उपाध्याय समग्रतावादी विचारक थे। वे व्यक्ति और समाज के बारे में आध्यात्मिक और भौतिक दोनों दृष्टियों से सामंजस्यपूर्ण दृष्टिकोण रखते थे। दीनदयाल उपाध्याय, महात्मा गाँधी की स्वदेशी भावना के समर्थक थे। वे प्राचीन वर्ण व्यवस्था व धर्म के ऊपर समाज की व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे। उनके अनुसार—“ धर्म का अर्थ किसी मजहब, सम्प्रदाय या पूजा पद्धति से नहीं है। धर्म वास्तविक अर्थ वे सनातन नियम, जिनके आधार पर किसी सत्ता की धारणा हो और जिनका पालन कर व्यक्ति अभ्युदय और निःश्रेयस प्राप्ति कर सके धर्म का मूल तत्व सनातन हैं, किन्तु उनका विवरण देश काल परिस्थिति के अनुसार बदलता है। इस संक्रमणशील जगत में धर्म ही वह तत्व है जो स्थायित्व

लाता है इसलिए धर्म को ही नियंता माना गया है। प्रभुता उसी में निहित है। पं० दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और समाज के संबंध के विषय में उदार विज्ञानवादी हैं उपाध्याय जी के अनुसार व्यक्ति और समाज के बीच कोई संघर्ष नहीं है। यदि कही है तो वह विकृति का लक्षण है। उनका मानना है कि—“समष्टि हित के लिए व्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित करने की आवश्यकता नहीं है। वास्तव में स्वैराचार में व्यक्ति का विकास नहीं विनाश है। समष्टि के साथ एकात्मता ही व्यक्ति की पूर्ण विकसित अवस्था है। व्यक्ति ही समष्टि की पूर्णता का माध्यम और माप है। ”

दीनदयाल उपाध्याय जी के अपने सामाजिक चिंतन में वे प्राचीन वर्ण व्यवस्था तथा पुरुषार्थ चतुष्टय के आधार पर समाज रचना खड़ी करने के पक्षधर हैं। जहाँ पूँजीवाद सिर्फ अर्थ एवं काम, पुरुषार्थ के आधार पर ही अपना पूरा दर्शन खड़ा करते हैं। वहीं एकात्म मानव दर्शन अर्थ एवं काम की महत्ता को स्वीकारते हुए, उसे केन्द्र में रखकर एक तरफ धर्म एवं दूसरी तरफ मोक्ष की दीवारों से उसे बाँधता है। ताकि अर्थ और काम उन्मत्त होकर विनाश का कारण न बने धर्म और मोक्ष रूपी नदी के तटों के बीच अर्थ और काम का प्रवाह नियन्त्रित होकर लोक कल्याण करे। यही भारत का सनातन ऋषि चिंतन रहा है। इसी को उपाध्याय जी ने नए संदर्भ में दोहराया है।

निष्कर्ष

पं० दीनदयाल उपाध्याय का 'एकात्म मानवदर्शन' कोई नया दर्शन नहीं है वरन वैदिक काल से चले आ रहे सनातन प्रवाह का युगानुरूप प्रकटीकरण है। जिसमें व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और समष्टि को एक माला की कडी के रूप में देखा गया है। एकात्म मानववाद दर्शन की जड़ें हमारे देश भारत में समाहित हैं तथा यह समाज के समस्त मानवों के लिए आत्म गौरव से परिपूर्ण, आत्मीयता युक्त, सत्य के धरातल पर स्थापित कर्तव्य बोध का संदेश है। जिसको हम आज की परिस्थिति में राष्ट्र संदेश भी कह सकते हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि एकात्म मानव दर्शन जड़ से लेकर चेतन तक, व्यक्ति से समष्टि तक, जीवन के पत्येक पहलू का विकास और विचार करने वाला, भारतीय जीवन दर्शन के चार पुरुषार्थों पर आधारित पूर्णतया भारतीय विचारधारा है। जो मानव के आध्यात्मिक मानसिक, शारीरिक, समाजिक के साथ-साथ व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की आधारशिला तैयार करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. उपाध्याय, दीनदयाल (2014). एकात्म मानवाद: सिद्धांत, प्रभात प्रकाशन. नई दिल्ली
2. उपाध्याय, दीनदयाल (2008). एकात्म मानवाद: जागृति, प्रकाशन. नोएडा
3. उपाध्याय, दीनदयाल (2014). एकात्म मानवाद: विवेचन, प्रभात प्रकाशन. नई दिल्ली
4. उपाध्याय, दीनदयाल (2011). एकात्म मानव दर्शन, एकात्म मानव दर्शन अनुसंधान एवं विकास प्रतिष्ठान. नई दिल्ली
5. उपाध्याय, दीनदयाल (2016). दीनदयाल उपाध्याय: संपूर्ण वाङ्मय, खण्ड-12 प्रभात प्रकाशन. नई दिल्ली
6. उपाध्याय, दीनदयाल (2014). राष्ट्र चिंतन, लोकहित प्रकाशन. लखनऊ
7. शर्मा महेश चन्द्र (2018). दीनदयाल उपाध्याय: कर्तव्य एवं विचार, प्रभात प्रकाशन. नई दिल्ली
8. उपाध्याय, दीनदयाल (2014). पालिटिकल डायरी, सुरुचि प्रकाशन. नई दिल्ली